शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मई 2014

डॉ शकुन्तला कालरा के बाल साहित्य का प्रदेय

रेखा मण्डलोई (शोधार्थी)
इन्दौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

चेतना और चिंतन, सृजनात्मक उत्साह और उदात्त दृष्टि, सृजन का बहुरंगी रूप, अनुभूति का उफान और उसके तीव्रतर संवेग ये चारों आयाम लिए डॉ. शकुन्तला कालरा का बाल साहित्य हिन्दी साहित्य जगत को नई दिशा प्रदान करता है। वे एक साथ कहानी, कविता, आलोचना, निबंध, शोध समीक्षा आदि अनेक विधाओं के लिए पारखी दृष्टि रखने वाली लेखिका हैं। युगानुकूल बाल साहित्य की आवश्यकता को आत्मसात करते हुए सृजन धर्मिता में तल्लीन हैं। उनके काव्य में राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, पर्यावरण, मानवीय व नैतिक चेतना के समग्र भाव समाहित है।

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य का इतिहास लगभग 10 वीं शताब्दी से भी पुराना है। किन्तु बाल साहित्य के इतिहास की शुरूआत उसी दिन हुई जब पहली बार मानव ने इस धरा पर जन्म लिया, शायद उससे भी पहले। प्रकृति में जितनी ध्वनियाँ हैं- नदी कल-कल करती है, वर्षा की बूँदें टप-टप गिरती हैं, पत्ते सर-सर करते हैं - ये सब बाल गीत हैं।1 बालक का हँसना, उसका किलकिलाना, उसका रोना भी उसका काव्य ही है। उसमें भी एक लय होती हैं। महाकवि सूरदास के बाल कृष्ण दर्शन को भी बाल साहित्य से अलग नही किया जा सकता है। अमीर खुसरो की पहेलियाँ, मुकरियां, ढकोसले बालकों का मनोरंजन करते आए हैं। जयमल द्वारा लिखी गोरा बादल की कथा ,हिन्दी की पहली बाल पुस्तक है। निरंकार देव सेवक की 'बाल गीत साहित्य' नामक पुस्तक को बाल साहित्य का इतिहास कहा जाएगा। बाल साहित्य लेखन का कार्य भारतेन्दु हरिश्चंद्र, बाल मुकुन्द गुप्त, श्यामनारायण पाण्डेय, सुभद्राकुमारी चौहान, सोहनलाल द्विवेदी, प्रेमचंद, रामधारीसिंह दिनकर, श्रीधर पाठक, रामनरेष त्रिपाठी, हरिवंशराय बच्चन, रामवृक्ष बेनीपुरी, अक्षयकुमार जैन आदि बड़ो का साहित्य लिखने वाले साहित्यकारों ने भी किया है। एक अच्छा बाल साहित्य बालक को मित्रवत् सही दिशा देकर घर में स्वस्थ वातावरण प्रदान करने का सामर्थ्य रखता है। बाल साहित्य की पुस्तकें एकान्त में बालकों का मनोरंजन करती हैं। भीड़ में उन्हें आस-पास की दुनिया की जानकारी देती हैं। मातृवत् उनकी जिज्ञासा को शान्त करती हैं। पितृवत् उनका संरक्षण करती हैं।

उनकी बौद्धिक एवं आत्मिक क्षुधा को भी शान्त करती है। बालकों को सहज रूप में जाने-अनजाने में जीवन की षिक्षा भी बाल-साहित्य से मिलती है। बाल कहानियों में जो जीवन मूल्यों की प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में चर्चा होती है, वे अंकुर के रूप में बाल-मन में बैठ जाते हैं। बाल साहित्य बालकों के चहुमुखी विकास में उनके जीवन को आलोकित करने वाली मशाल है।

वैसे तो बाल साहित्य की एक समृद्ध परम्परा विकास का एक क्रम है। पंचतंत्र, हितोपदेश तथा कथा सरितसागर आदि इस बात के ज्वलंत उदाहरण है। बाल कथा का एक विपुल भण्डार तो

मौखिक परम्परा के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होता चला आ रहा है। फिर चाहे अकबर-बीरबल और तेनालीराम के किस्से हो या लाल बुझक्कड़ के किस्से।

विषय वस्तु

प्रारम्भिक काल के बाल साहित्य में आदर्शवाद, नैतिकता, देश-प्रेम आदि चैतन्य भाव का प्रस्फुटन सहित रहता था, क्योंकि बाल साहित्य द्वारा बच्चों में वे गुण विकसित होते हैं जो उनके मानसिक धरातल को ऊँचा उठाने के साथ-साथ भविष्य को एक निश्चित दिशा देते हैं। सम्पूर्ण विश्व ने बाल विकास में बाल साहित्य के महत्व को समझते हुए उसे एक निश्चित विचारधारा के अनुरूप तैयार किया है, जैसे - 1.अँग्रेजी का बाल साहित्य - बच्चों में क्रियात्मक भावना का संचार करता है। 2.अमेरिका का बाल साहित्य - व्यावहारिक पक्ष की प्रधानता को स्थापित करता है। 3.रूस का बाल साहित्य - जीवन को परिस्थितियों के अनुरूप बनाने की प्रेरणा देता है। 4.फ्रांस का बाल साहित्य - सुखी जीवन बिताने के लिए बच्चों को मुसीबतों से संघर्ष करना सिखाता है।

भारत का बाल साहित्य - भारत के परिप्रेक्ष्य में सच्चा बाल साहित्य वही है, जो बालकों में प्रेम, सेवा, सत्य, ईमानदारी, पर दुःखकातरता, परिश्रम आदि शाश्वत मानव मूल्यों के अंकुर बालमन में रोप सके, बच्चों में एक सहज संवेदना जगा सके अर्थात दूसरों के सुख-दुख में सहभागी बनने का भाव जगा सके, साथ ही जो बच्चों का स्वस्थ विकास करने में सहायक हो और ज्ञान वर्धक होने के साथ साथ नैतिक गुणों से भी युक्त हो। बच्चों के सर्वांगीण विकास में इसीलिए साहित्य की भूमिका को बहुत महत्व दिया गया है। पाल हेजार्ड ने लिखा है, 'पुस्तकें वे ही अच्छी होती हैं जो बच्चों को साहस व ज्ञान ही नही, बल्कि अंतर्ज्ञान भी दे सकें; एक ऐसा सरल सौन्दर्य दे सकें जिसे वे सरलता से ग्रहण कर सकें और बच्चों की आत्मा में ऐसी भावना का संचार करें जो उनके जीवन में चिरस्थायी बन जाए। वे सार्वलौकिक जीवन के प्रति उनके मन में आस्था उत्पन्न करें और खेल की महत्ता तथा साहस के प्रति आदर जाग्रत करें।'3 बच्चे राष्ट्र की आत्मा, भविष्य के निर्माता एवं सृष्टि का सौन्दर्य हैं। बालकों के सरल, सहज स्वभाव के कारण उनको कुछ इस प्रकार परिभाषित किया गया है - "बालक सुमन-पराग सरस रस बंध है, बालक वाल्मीकि का पहला छंद है। बालक परमहंस शिव सुंदर सत्य है, बालक सरगम कला स्वयं साहित्य है।।" बच्चें नींव की ईंट हैं, इन्हें इस प्रकार पकाना चाहिये कि इमारत आलीशान हो, बच्चों के संबंध में नेहरूजी ने भी कुछ इसी प्रकार अपने विचार व्यक्त किये हैं। हितोपदेश के रचनाकार नारायण पंडित के अनुसार, जैसे- पक्के घड़े पर बना हुआ चित्रांकन (घड़े के पक जाने पर) पक्का हो जाता है। उसी प्रकार बचपन के संस्कार भी पक्के हो जाते हैं। एक बालक की मानसिक अवस्था का 80 प्रतिशत विकास तो पांच वर्ष की आयु तक हो जाता है। अतः बाल मन को ध्यान में रखकर रचा गया ऐसा साहित्य जो बच्चों की कल्पनाशीलता बढ़ाये, उनमें जिज्ञासा और कौतूहल के भाव पैदाकर उन्हें मनोवैज्ञानिक ढंग से अत्यंत सरल शैली में रचा गया हो - बाल साहित्य कहलाता है। बाल साहित्य की सार्थकता बाल साहित्य सृजनकर्ता पर निर्भर होती है। उत्कृष्ट बाल साहित्य का निर्माण करने के लिये साहित्यकार को उदार सरल, सहज एवं ऊर्जावान

जैसे बहुआयामी व्यक्तित्व का होना आवश्यक है। अनेक प्रतिष्ठित बाल साहित्यकारों के मध्य एक ऐसी ही दैदिप्यमान नक्षत्र की तरह उभरती विलक्षण साहित्यिक प्रतिभा डॉ.शकुन्तला कालरा है। "हिन्दी बाल साहित्य की अविराम यात्रा की प्रगति में पुरूषों के साथ-साथ स्त्रियों ने भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। बाल साहित्य सृजन में संलग्न नारियों में डॉ.शकुन्तला कालरा का नाम विशेष उल्लेखनीय है।"4

आज डॉ.कालरा का बाल चिंतन एक ऐसे साहित्य सृजन की ओर उन्मुख हुआ है जो बालकों में राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरण, मानवीय व नैतिक चेतना के विकास का आधार बने। डॉ.शकुन्तला कालरा की अनेक पौराणिक कथाओं मे प्राचीन भारतीय संस्कृति, समाज और जीवन की झलक मिलती है। एक समय था जब देश में अंग्रेजों का शासन था। देश पूरी तरह अंग्रेजों की दासता से जकड़ा हुआ था और जनता को अपने कार्य व्यवहार अंग्रेज शासकों की मानसिकता अनुसार करना होते थे। लोगों की त्रासदी का अनुभव तात्कालिक लेखक व कवियों ने करते हुए अपनी क्रांतिकारी ओजस्वी वाणी द्वारा लोगों में राष्ट्रीयता के भाव को प्रस्फुटित करने की पुरजोर कोशिशें की। एक तरफ भारतेन्दुजी ने जन जागरण से पूरे देश के नौनिहालों में राष्ट्रीय प्रेम जागृत करने के उद्देष्य से देशभक्ति से ओत-प्रोत बाल साहित्य की रचना की तो दूसरी ओर निरालाजी ने अपनी सशक्त और क्रांतिकारी रचनाओं के माध्यम से बालकों में देश-प्रेम की ज्योति को प्रज्ज्वलित करने का अटूट प्रयास किया। वर्तमान समय में हम देखते है कि भारत विदेशी शासकों के चंगुल से तो मुक्त हो चुका है, फिर भी एक तरफ देश में अनैतिकता, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, आतंकवाद जैसी राष्ट्रदोही शक्तियां बढ़ती जा रही हैं जो देश को भीतर से खोखला करने में लगी हुई हैं। ऐसी तमाम विषम परिस्थितियों से देश के नौनिहालों को अवगत कराते हुए तथा इन बुराइयों को दृढ़ता से उखाड़ फेंकने की ताकत पैदा करने के लिये राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरण, मानवीय व नैतिक चेतना का भाव जागृत करने का कार्य बाल साहित्यकारों ; विशेषकर डॉ.शकुन्तला कालरा द्वारा किया जाना एक अतुलनीय योगदान की श्रेणी में आता है। राष्ट्रीय चेतना के भाव देश की मिट्टी के प्रति प्रेम, उसकी विरासत के प्रति प्रणत भावना, उसके जन और संस्कृति के प्रति निष्ठा, अतीत की गौरवमयी गाथा, वीर पुरूषों के प्रति आदर भावना, वर्तमान दुरावस्था पर असंतोष तथा भविष्य के प्रति उज्ज्वल आकांक्षा आदि माध्यम से व्यक्त किये जा सकते हैं।

डॉ.हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार "राष्ट्रीयता का अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का अंश है और इस राष्ट्र की सेवा के लिये प्रत्येक व्यक्ति को सब प्रकार के त्याग और कष्ट स्वीकार करने चाहिये।" राष्ट्रीय चेतना मानवता के आदर्श का मूल आधार तभी बन सकती है, जब उसमें सांस्कृतिक चेतना का समावेश हो क्योंकि संस्कृति उत्तमता, सुरूचि संपन्नता शिष्टाचार, विनम्रता और अलंकरण आदि का संकेत करती है। मानव जीवन के संस्कार सुधार के लिए हमारे पूर्वज ऋषि-मुनियों ने हमें जो श्रेष्ठ आचार विचार प्रदान किये वे ही हमारी संस्कृति कहलाई। अपनी संस्कृति के प्रति प्रेम, आसक्ति और गर्व का भाव अनुभव करवाने के लिए आवश्यक है कि बालकों में सांस्कृतिक चेतना का भाव समाहित हो। समाज ही बच्चों को एक सुसंस्कृत इन्सान

बनाता है, इसीलिए बच्चों के विकास के लिए यह आवश्यक माना गया है कि वे जिस समाज में पले और बड़े हो, वह उन्हें नई और रचनात्मक दिशा देने वाला हो तथा उन्हें एक ऐसे सुखद भविष्य की ओर अग्रसर करे जिससे सारा राष्ट्र सुखी बने। यही कारण था कि प्राचीन काल से आज तक हर युग और समाज में इस बात के निरंतर प्रयत्न किये जाते रहे कि बच्चों को समसामयिक सामाजिक परिवेश से जोड़ा जाए और उसके अनुकूल ही भविष्य की दिशा दी जाए। डॉ.शकुन्तला कालरा की कथाओं में बच्चों को समाज के विभिन्न पहलुओं से जोड़ने के प्रयास किए गए हैं। वस्तुतः जब तक बच्चों का समाजीकरण नही किया जाता, कोई समाज और कोई भी राष्ट्र सही दिशा में विकास नहीं कर सकता। निश्चय ही हर समाज के अपने राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आदर्श होते हैं। यह भी सही है कि इन आदर्शों और जीवन-मूल्यों में एक निश्चित अवधि के बाद परिवर्तन अनिवार्य हो जाता है। इसलिए यह बहुत आवश्यक हो जाता है कि उस समाज के बच्चे अपने आदर्शों से परिचित हों और जिन मूल्यों की सामयिकता कमजोर पड़ गई है या जिन आदर्शों का अवमूल्यन हो गया है, उन्हें वे छोड़ दें या भविष्य में उन्हें छोड़ने के लिये तैयार रहें। समाज के आदर्शों, मूल्यों और मान्यताओं के प्रति विवेकशील विश्लेषणवादी विचारधारा जागृत करना ही बच्चों का सही समाजीकरण है।

समाज के प्रति अपने दायित्वों को समझना और उन्हें पूरा करने योग्य बनना समाजीकरण की बुनियादी मांग है। इसके लिए आवश्यकता होती है बच्चों की मानसिकता बदलने की। यह मानसिकता कोई कड़वी-मीठी दवा पिलाकर नही बदली जा सकती और न ही यह केवल विद्यालयों मे ही संभव है। यह काम तो उन तमाम शक्तियों का होता है जो बालकों को विविध रूपों में प्रभावित करती है और उनके परिवेश का निर्माण करती है। घर का वातावरण, माता-पिता का आचरण, उनकी रुचियाँ, पड़ोसियों का व्यवहार, बस्ती-मुहल्ले का वातावरण और संपूर्ण कस्बे या शहर का जीवन - ये सब बालक के समाजीकरण में योगदान देते हैं। दूसरे शब्दों में, यदि बालक का विकास होता है तो उसका प्रभाव उसके घर, मुहल्ले, कस्बे, प्रदेष और फिर संपूर्ण राष्ट्र के विकास के रूप में प्रतिफलित होता है। इसलिए बच्चों के लिए जिस साहित्य का निर्माण किया जाता है, उसका मुख्य उद्देश्य तो मनोरंजन ही होता है, किन्तु साथ-साथ वह समाज से बच्चों को जोड़ता भी है और उन्हें भविष्य की दिशा भी देता है। पहेलियों, चुटकुलों, गीतों और कहानियों के माध्यम से बच्चों के समाजीकरण के सतत प्रयत्न होते हैं। अतः डॉ शकुन्तला के बाल साहित्य ने बच्चों का समाजीकरण करने की दिशा में अपना अमूल्य योगदान दिया है।

सामाजिक चेतना जागृति के साथ-साथ बालकों में अपने आस-पास का वातावरण व परिवेश ; जिसमें पृथ्वी,आकाश, समुद्र, प्रकृति, पेड़-पौधे, जीव जन्तु तथा जलवायु आदि सम्मिलित है, अर्थात पर्यावरण के प्रति जागृति लाना आवश्यक है। जनसंख्या वृद्धि के साथ साथ मानव की भौतिक जरूरतों में बहुआयामी वृद्धि हुई है। प्राकृतिक संसाधनों के अनियमित दोहन से पर्यावरण का निरंतर अपघटन होता जा रहा है। पर्यावरण प्रदूषण में जल, वायु, ध्वनि तथा भूमि ये चारों

प्रकार के प्रदूषण मानव जाति के लिये घातक हैं। भविष्य के कर्णधारों के अंतर्मन में पर्यावरण के प्रति जागरूकता पैदा करने का कार्य भी अनेक बाल साहित्यकारों द्वारा किया जा रहा है जिनमें से एक विभूति डॉ.शकुन्तला कालरा है। "साहित्य में सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को स्थान देने से वे सांस्कृतिक श्रेष्ठता को जीवंत बनाने में सहायक होते है। जीवन मूल्य स्थायी विश्वास होते हैं।"5 एक उज्ज्वल राष्ट्र की मजबूत नींव उसकी नैतिकता पर ही अवलम्बित होती है। नैतिक मूल्य हमारी संस्कार चेतना हैं जो बालकों के चरित्र निर्माण की दिशा में अपनी महती भूमिका निभाते हैं। नैतिक मूल्यों के द्वारा बालकों में गुणों का विकास तो होता ही है, वह सामाजिक भी बनता है। डॉ.शकुन्तला कालरा ने बाल मनोविज्ञान आधारित ऐसे बाल साहित्य की रचना की है जो बालकों के मनोरंजन के साथ साथ उनके बौद्धिक व नैतिक गुणों का विकास भी कर सके।

डॉ.कालरा की लेखन शैली अत्यंत सरल, सहज, सरस एवं बाल गतिविधियों, बाल स्वभाव व बाल मन का चित्रण करने वाली है। उनकी रचनाओं को पढ़कर बालक मंत्र मुग्ध हो जाते हैं। रचनाएं सोद्देश्य होने के कारण बालकों में न केवल सद्गुणों का बीजारोपण करती है बल्कि बीज रूप में सुप्त गुणों को अंकुरित कर उन्हें पल्लवित तथा पुष्पित भी करती है। साथ ही ये रचनाएं बालकों में दया, करुणा, सत्य, न्याय, परोपकार, ईमानदारी, मानवता, विनम्रता, भाईचारा और सहयोग आदि नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था जगाकर उनका आत्मिक उन्नयन भी करती है। डॉ.कालरा की कहानियाँ कहीं भी उपदेशों से बोझिल नही हुई हैं। कहानियां कहीं आधुनिक भाव बोध पर आधारित हैं तो कहीं पौराणिक भावों को समेटे हुए हैं, कहीं परीकथाओं के माध्यम से कल्पनालोक की सैर कराती हैं तो कहीं विज्ञान कथाओं के माध्यम से ज्ञान की कसौटी को कसती हैं। साथ ही साथ ऐतिहासिक कहायिों के माध्यम से इतिहास दर्शन से भी नही चूकती हैं। इनकी रचनाएं विज्ञान, संस्कृति और मनोविज्ञान को सही रूप में सहज भाव से रेखांकित करती हैं। माता-पिता बच्चे के जन्मदाता होते हैं, पर बच्चा अपने मां-बाप के स्वभाव को चरित्र का निर्माता बनने की क्षमता यकीन रखता है और यह क्षमता, डिग्री के अन्तर के साथ हर बच्चें में होती है। यूँ ही नहीं कह दिया गया कि 'चाइल्ड इज़ फ़ादर आफ़ द मैन'।

डॉ.शकुन्तला कालरा का यह कहानी संग्रह, 'अपना घर', कहने को बालसाहित्य की श्रेणी में ही आएगा, क्योंकि यह घोषित रूप से बच्चों को सम्बोधित कहानी-संग्रह है। पर इस कहानी-संग्रह में शायद ही कोई एक भी कहानी ऐसी हो, जिसमें बच्चों के साथ-साथ बड़ों को भी संदेश नही मिला है। श्रेष्ठ अध्यापक में क्या गुण अपेक्षित हैं, माँ-बाप बच्चों को कैसे अपने घर में अपना घर होने का अहसास दे सकते हैं, देश के सबसे बड़े अभिशाप भिक्षावृत्ति से बच्चों को मुक्त रखने में वयस्कों की भूमिका क्या है, बच्चों के विकास का मानदण्ड उसके अंक है या कुछ और, बच्चों की सुरक्षा आखिर माँ-बाप का दायित्व है न कि बच्चों का। इतने सारे संदेश, बच्चों के लिए लिखी गई कहानियों के माध्यम से, एक साथ देकर डॉ कालरा ने बाल साहित्य को एक नया, अद्भुत आयाम दिया है।6 'हर बालक अनगढ़ पत्थर की तरह है जिसमे सुंदर मूर्ति छिपी है, जिसे शिल्पी की आँखें ही देख पाती हैं। वह पत्थर में पहले से

मौजूद उस सुंदर मूर्ति को अपने कौशल से तराशकर सुंदर मूर्ति में बदल सकता है। लेखिका ने इस प्रकार के सुंदर विचार अपनी निबंध रचना "बच्चों का व्यक्तित्व विकास कैसे हो?" में व्यक्त किये है।'7 बाल चिंतन आधारित निबंधो की रचना में पोलक के विचार से भी रूबरू करवाया है। पोलक के अनुसार "बच्चे स्वर्ग के देवताओं की अमूल्य भेंट है।" लेखिका के अनुसार इस अमूल्य भेंट की देखभाल हमें पूरे मनोयोग से करना आवश्यक है क्योंकि बालकों की उन्नति में ही पूरे राष्ट्र की उन्नति व समृद्धि समाहित है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति ही नहीं वरन् उसका अस्तित्व भी बाल शक्ति के प्रभावशाली उपयोग में निहित है। आज के बालक जो कल के युवा होंगे, उनकी क्षमताओं, योग्यताओं का शीघ्र पता लगाकर उनको वैसा प्रशिक्षण देकर ऐसी दिशा दी जाय जिससे केवल उन्हें ही आत्म संतुष्टि न हो वरन् राष्ट्र की समृद्धि में उनका समुचित योगदान मिल सके। माँ और बालक सृष्टि का चिर सनातन सत्य। इन दोनों के बीच न जाने कब किन्ही अज्ञात क्षणों में छलछलाती, गुदगुदाती शब्दों के पंखो पर लय की थपथपाहट और भोले रिश्तों की गर्माहट के बीच माँ के होठों से फूटी लोरी। यानि एक बाल कविता एक बाल गीत तब से अब तक यह कविता विभिन्न रूपों, प्रवृत्तियों के बीच ठीक ऐसे विकसित होती रही है जैसे बीज से अंकुर फिर पौधा, कली और फूल फल यह सिलसिला एक बहती गुनगुनाती नदी की तरह चला आ रहा है, चलता रहेगा क्योंकि जीवन का एक नाम कविता है - काव्य के प्रति ऐसे भाव समेटे लेखिका ने बालकों के अपार संसार की कल्पना को अपने काव्य संग्रह में साकार किया है। बाल मनोविज्ञान को केन्द्र में रख कर रची गई इन कविताओं में बच्चों की तरह अनगढ़ सुघढ़ स्वभाव में अनुभूति से अभिव्यक्ति तक भरा पूरा बच्चा कुलांचे भरता दिखाई देता है। आपके काव्य की भाषा सरल, सहज और मधुरता से परिपूर्ण है। आपके काव्य में राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक व मानवीय मूल्य आधारित नैतिकता के दर्शन सहज स्वाभाविक रूप में दृष्टिगोचर होते हैं।

निष्कर्ष

"आज के बाल साहित्य की दुर्बलता उसकी एकांगिकता है। बाल साहित्य मात्र कहानी परक होकर रह गया है। बाल-काव्य को कम महत्व दिया जा रहा है, यह उचित नही है। शिशु काव्य, बाल काव्य और किशोर-काव्य के विविध रूपों का सम्यक् विकास होना चाहिए।"8 बच्चों के लिए लगभग सभी भारतीय भाषाओं में पर्याप्त बाल साहित्य की रचना हुई है।

आज जहाँ बाल साहित्य लेखन में मौलिकता है, वहीं उसमें प्रयोग और विषयों की विविधता भी है। आदिकालीन कवि जगनिक के 'आल्हा खण्ड' के कुछ बालोपयोगी अंशों तथा अमीर खुसरो की पहेलियों एवं मुकरियों से प्रारम्भ हुई बाल साहित्य की विकास यात्रा धीमी गति से आगे बढ़ते हुए विभिन्न युगों में विभिन्न बाल साहित्यकारों को प्राप्त करके निरंतर गतिषील है। स्नेही व्यक्तित्व की धनी डॉ शकुन्तला कालरा का जीवन मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से पोषित है। उनका साहित्य बालको में कल्पना प्रवणता का उद्रेक करता है। आपके साहित्य ने बाल साहित्य को अपरिमित योगदान के द्वारा समृद्ध बनाया है। वर्तमान समय में जब बाल साहित्य मूल धारा से कटता जा रहा है, ऐसी स्थिति में लेखिका के चिंतन धारा के प्रस्फुटन के माध्यम से समाज

का रूझान बाल साहित्य लेखन व पठन की ओर अग्रसर करना इस शोध पत्र का मूल उद्देश्य है।

संदर्भ ग्रन्थ

1.बाल साहित्य का स्वरूप एवं रचना संसार पेज 250 , डॉ.शकुन्तला कालरा
2.बाल साहित्य रचना और समीक्षा, डॉ.हरिकृष्ण देवसरे पेज 36-37
3.बाल साहित्य मेरा चिंतन –डॉ.हरिकृष्ण देवसरे पेज 198
4.बाल साहित्य समीक्षा डॉ.विनोचंद्र पाण्डेय विनोद 'विनोद' - पृ.सं.7
5.बाल साहित्य समीक्षा के प्रतिमान और इतिहास लेखन डॉ.सरोजनी पाण्डेय
6.अपना घर, डॉ.शकुन्तला कालरा
7.बच्चों का व्यक्तित्व विकास कैसे हो? , डॉ.शकुन्तला कालरा
8.बाल साहित्य समीक्षा जनवरी 1982 पृ.16 श्री प्रसाद